

अनिल कुमार

इतिहास विभाग, आर०बी०जी०आर०

कॉलेज महाराजगंज (खान)

सूती वस्त्र उद्योग एवं जूट उद्योग (शेष भाग)

— 8 —

Page No.

Date: / /

जूट उद्योग

भारत में 1855 से जूट निर्माण प्रारंभ हुआ। इसी वर्ष सिरामपुर के निकट बंगाल में जार्ज आर्कलैंड ने एक जूट मिल स्तड़ी की और जूट निर्माण शुरू किया। वहाँ जूट मिल उद्योग स्थापित करने की सारी अनुकूल परिस्थितियाँ विद्यमान थीं। मजदूर, पटयन व कच्चा माल कोयला आदि प्रचुर मात्रा में उपलब्ध थे। फिर भी मशीनरी तकनीकी ज्ञान एवं प्रशिक्षित श्रम के बारे में उद्योग अपने विकास के प्रारम्भिक काल में लौकाशायर पर निर्भर था।

1856 ई. में देश में पहला जूट पावरलूम स्थापित किया गया। जूट में भात का एकाधिकार बना रहा और बंगाल के जूट उद्योग को बहुत लाभ पहुँचा। इसने नवीन मिलों की स्थापना को प्रोत्साहित किया। 1874 ई. में पाँच मिलें स्तौली गईं। इस प्रकार 1882 तक देश में 20 जूट की मिलें हो गईं जिनमें 20,000 व्यक्ति काम करते थे। इनमें से 18 मिलें बंगाल में और 14 कलकत्ता के समीप थीं।

1884 से 1895 ई. तक जूट मिलों की संख्या 24 से बढ़कर 29 हो गई जिसमें 75,157 व्यक्ति कार्यरत थे। 1905-06 में इस उद्योग में मंदी आई। 20वीं शताब्दी के प्रारंभ में जूट मिलों का विकास मुख्यतः कलकत्ता के नजदीक रहा। जूट का निर्यात भी बढ़ गया। 1913 में मिलों की संख्या बढ़कर 64 हो गई।

प्रथम विश्वयुद्ध काल में जूट उद्योग ने सरकारी आदेशों के आधार पर कार्य किया। इस समय कच्चे जूट का उपभोग भारतीय मिलों में 1913 में 44 लाख गॉंठों से बढ़कर 50 लाख गॉंठों हो गया और कच्चे जूट का निर्यात घटकर 1912-1918 में 17 लाख गॉंठों हो गया। 1916 में निर्यात कर लगाया गया जिसे 1917 में बढ़ाया गया। इससे व्यापार को नुकसान पहुँचा, क्योंकि भारतीय उद्योगों को एकाधिकार प्राप्त था। इस अवधि में जूट का मूल्य नहीं बढ़ा



और मजदूरी भी कम हो गई। प्रथम विश्वयुद्ध-काल में जूट मिलों ने खूब लाभ अर्जित किया। 1915-15 में मिलों की संख्या 70 से बढ़कर 1929-30 में 98 व पुँजी का विनियोग 18 करोड़ रुपये हो गया।

युद्धोत्तर वर्षों में कच्चे एवं निर्मित जूट का निर्गत लाइसेंस के अतिरिक्त रोक दिया गया। ऐसा परिवहन की कठिनाइयों, निम्न मूल्य, निम्न मजदूरी एवं प्रशासकीय आदेशों के कारण किया गया। 1915-25 के बीच जूट मिलों ने अपनी पुँजी पर 90% वार्षिक लाभ अर्जित किया। 1935-36 में जूट मिलों की संख्या 104 व पुँजी विनियोग 30 करोड़ रुपये था एवं 2,77,985 लोग कार्यरत थे। 1929-30 की विश्वव्यापी आर्थिक मंदी ने उद्योग को प्रभावित किया। जूट की मांग कम हो गई।

1938-39 में मिलों की संख्या 107 की जिसकी प्रदत्त पुँजी 30 करोड़ रुपये थी। मिलों की संख्या में वृद्धि होने पर उत्पादन में आश्चर्यजनक वृद्धि हुई। जुलाई, 1939 में पूरक समझौते के अन्तर्गत मिल ने पड़ रहे प्रति सप्ताह काम काना निश्चित किया। उद्योग का असंतोषप्रद लक्षण उसका विदेशी प्रबंधन था एवं उत्पादन की संपूर्ण प्रक्रिया को जानने हेतु भारतीयों को प्रशिक्षण देने की योजना का आभाव था।

इसी समय 1939 में द्वितीय विश्वयुद्ध शुरू हो गया। युद्ध विद्रोह से जूट की मांग बढ़ गई। फलतः मिलों ने 60 घंटे प्रति सप्ताह काम काना शुरू किया। मासिक उत्पादन में आश्चर्यजनक वृद्धि हुई। युद्ध काल में उद्योग के विस्तार की सीमा बाजार की हानि तथा जहाजरानी की कठिनाइयों के कारण बनी रही। फलतः युद्ध काल में भी उद्योग का विकास सीमित रहा। लाभ अधिक होने का प्रमुख कारण यह था कि निर्मित माल एवं कच्चे जूट के माल के मूल्यों में काफी अंतर था। युद्ध काल में जूट मिलों की संख्या 1938-39 में 107 से

बढ़कर 1945-46 में 111, कच्यों की संख्या 67,939 से बढ़कर 68,388 तथा तड़ुओं की संख्या 1,350,465 से बढ़कर 1,444,863 हो गई।

देश विभाजन ने जूट उद्योग को बहुत प्रभावित किया। जूट मिलें भारत में रही जबकि 80% कच्चा जूट पाकिस्तान को चला गया। विभाजन के बाद भारत में लाख और पाकिस्तान 68 लाख गोंठों का उत्पादन करता था। भारतीय जूट उद्योग को 35 लाख गोंठें वार्षिक कच्चे जूट की आवश्यकता थी। किंतु भारत ने 1947-48 में 15.5 लाख गोंठों का उत्पादन किया। पाकिस्तान पर कच्चे जूट के लिए निर्भर रहने एवं 1949 में भारतीय रबारी के अवमूल्यन के कारण दोनों देशों में व्यापार में रकबावट आने से जूट उद्योग की दुर्दशा बढ़ गई। स्वतंत्रता प्राप्ति के तुरन्त पश्चात् जूट निर्माण का उत्पादन भारत में 1947-48 में 1035,000 टन से गिरकर 1950-51 में 8,92,000 टन हो गया तथा जूट माल का निर्गत 8,72,000 टन से गिरकर 6,50,000 टन हो गया।